Toppersnotes

Unleash the topper in you

UGC-NET

संस्कृत

National Testing Agency (NTA)

पेपर 2 || भाग – 1

SIERRA INNOVATIONS

UGC NET पेपर – 2 (संस्कृत)

क्र.सं.	अध्याय	पृष्ठ सं.
	इकाई - I	
	वैदिक-साहित्य	
1.	**(क) वैदिक-साहित्य का सामान्य परिचय**	
	वेदों का काल :	1
	❖ मैक्समूलर	2
	❖ ए.वेबर	2
	❖ जैकोबी	2
	❖ बालगंगाधर तिलक	3
	❖ एम.विन्टरनिट्ज़	3
	❖ भारतीय परंपरागत विचार	3
	संहिता साहित्य	3
	संवाद सूक्त :	7
	❖ पुरुरवा-उर्वशी	8
	❖ यम-यमी	8
	❖ सरमा-पणि	9
	❖ विश्वामित्र- नदी	9
	ब्राह्मण साहित्य	11
	आरण्यक साहित्य	16
	वेदांग :	17
	❖ शिक्षा	17
	❖ कल्प	19
	❖ व्याकरण	20
	❖ निरुक्त	21
	❖ छन्द	21
	❖ ज्योतिष	22
	इकाई - II	
2.	**(ख) वैदिक साहित्य का विशिष्ट अध्ययन**	
	1. निम्नलिखित सूक्तों का अध्ययन:	24
	ऋग्वेद:	24
	❖ अग्नि (1.1)	24
	❖ वरुण (1.25)	26

	❖ सूर्य (1.125)	29
	❖ इन्द्र (2.12)	31
	❖ उषस् (3.61)	33
	❖ पर्जन्य (5.83)	34
	❖ अक्ष (10.34)	35
	❖ ज्ञान (10.71)	38
	❖ पुरुष (10.90)	40
	❖ हिरण्यगर्भ (10.121)	43
	❖ वाक् (10.125)	46
	❖ नासदीय (10.129)	47
	शुक्लयजुर्वेद एवं अथर्ववेद:	
	❖ शिवसंकल्प	48
	अथर्ववेद:	
	❖ राष्ट्राभिवर्धनम् (1.29)	49
	❖ काल (10.53)	51
	❖ पृथिवी (12.1)	52
	2. ब्राह्मण-साहित्य :	
	❖ प्रतिपाद्य विषय	57
	❖ विधि एवं उसके प्रकार	58
	❖ अग्निहोत्र, अग्निष्टोम	59
	❖ दर्शपूर्णमास यज्ञ	60
	❖ पंचमहायज्ञ	60
	❖ आख्यान (शुनःशेप, वाङ्मनस्)।	60
	3. उपनिषद्-साहित्य :	61
	4. वैदिक व्याकरण, निरुक्त एवं वैदिक व्याख्या पद्धति :	
	❖ ऋक्प्रातिशाख्य : निम्नलिखित परिभाषाएँ –	88
	❖ निरुक्त (अध्याय 1 तथा 2)	91
	❖ निरुक्त अध्ययन के प्रयोजन	93
	❖ निर्वचन के सिद्धान्त	93
	❖ निम्नलिखित शब्दों की व्युत्पत्ति : आचार्य, वीर, ह्रद, गो, समुद्र, वृत्र, आदित्य, उषस्, मेघ, वाक्, उदक, नदी, अश्व, अग्नि, जातवेदस्, वैश्वानर, निघण्टु।	93
	❖ निरुक्त (अध्याय 7 दैवत काण्ड)	96
	❖ वैदिक स्वर : उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित।	97
	❖ वैदिक व्याख्या पद्धति : प्राचीन एवं अर्वाचीन	97
	❖ MCQs	99

I

UNIT

वैदिक साहित्य का सामान्य परिचय

वैदिक-साहित्य का सामान्य परिचय

वैदिक साहित्य भारतीय परम्परा तथा संस्कृति के प्राचीनतम स्वरूप पर प्रकाश डालने वाला तथा विश्व का प्राचीनतम साहित्य है। वैदिक साहित्य को श्रुति भी कहा जाता है, क्योंकि सृष्टिकर्ता ब्रह्मा ने विराट पुरुष भगवान की वेदध्वनि को सुनकर ही इसे प्राप्त किया है। अन्य ऋषियों ने भी इस साहित्य को श्रवण परम्परा से ही ग्रहण किया था।

वैदिक साहित्य का परिचय

- "विदन्ति जानन्ति विध्यन्ते भवन्ति विचारयन्ति सर्वे मनुष्याः सत्यविद्याः यैः वा तथा विद्वांसश्च भवन्ति ते वेदाः।" अर्थात् जिनके द्वारा सारी सत्यविद्याएँ जानी या प्राप्त की जाती हैं तथा जिनसे विद्वानों का ज्ञान होता है, वे वेद कहलाते हैं।

"इष्टप्राप्तनिष्टपरिहारयोरलौकिकमुपायं यो ग्रन्थो वेदयति स वेदः।"

- सायण आचार्य के अनुसार, वेद इष्ट की प्राप्ति और अनिष्ट के परिहार के अलौकिक उपायों को बताने वाले ग्रन्थ कहलाते हैं।
- वैदिक साहित्य का सर्वप्रथम ग्रन्थ वेद है- 'ज्ञान'। भारतीय संस्कृति में इनका महत्वपूर्ण एवं गौरवमय स्थान है। वेद शब्द विद् धातु में घञ् प्रत्यय जोड़कर सम्पन्न हुआ है।
- "विद्यन्ते ज्ञायन्ते लभ्यन्ते वा धर्मादिपुरुषार्थाः यस्मिन्निति वेदाः।" अर्थात् जिसके द्वारा धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष आदि पुरुषार्थों को जाना अथवा प्राप्त किया जाता है, वे वेद कहलाते हैं।

"प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न बुध्यते।
एवं विदन्ति वेदेन तस्माद् वेदस्य वेदता।"

- कुछ विद्वानों के अनुसार, प्रत्यक्ष या अनुमान के द्वारा दुर्बोध तथा अज्ञेय उपायों का ज्ञान वेदों में ही बताया गया है। अर्थात् वेदों का वेदत्व प्रत्यक्ष या अनुमान के आधार पर दुर्बोध और अज्ञेय का ज्ञान कराता है।
- इन सभी उपर्युक्त परिभाषाओं से सिद्ध होता है कि वेद ज्ञान के वे अक्षय कोश हैं, जिनमें सभी विषयों का समावेश है। मनुस्मृति में भी कहा है- 'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्' अर्थात् वेद समस्त धर्म का मूल है। वेद परमात्मा के निःश्वास माने गए हैं- 'यस्य निःश्वासितं वेदाः।'
- सृष्टि की उत्पत्ति के समय व्यावहारिक, नैतिक व आध्यात्मिक ज्ञान के लिए वेदों का प्रादुर्भाव हुआ। ये मानव जाति के प्राचीनतम धर्मग्रन्थ हैं।
- इहलौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के सुखों की प्राप्ति के स्थान वेद ही हैं। ये ही उचित और अनुचित के निर्देशक हैं।
- वेद साहित्यरूप से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। महाकाव्य , गीतिकाव्य, गद्यकाव्य, नाटक, आख्यान साहित्य आदि काव्य की सभी विधाओं की उत्पत्ति में वेदों का सक्रिय योगदान रहा है।
- भाषा-विज्ञान की दृष्टि से भी वेद अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। वैदिक भाषा के बिना आर्योपीय (इण्डो-यूरोपीय) भाषाओं का अध्ययन सम्भव नहीं है। वेदों के उपदेश सार्वकालिक और सार्वभौमिक हैं।

ToppersNotes Unleash the topper in you

वैदिक काल निर्धारण

- पं. दीनानाथ शास्त्री ने 'वेदकाल निर्णय' नामक पुस्तक में ज्योतिष के आधार पर यह सिद्ध किया है कि वेदों का रचनाकाल अब से तीन लाख वर्ष पूर्व का है।
  - ✓ मैक्समूलर -- 1200-1000 ई.पू.
  - ✓ ए. वेबर -- 1500-1200 ई.पू.
  - ✓ एम. विण्टरनिट्ज -- 2500-2000 ई.पू.
  - ✓ जैकोबी -- 4500-2500 ई.पू.
  - ✓ बालगंगाधर तिलक -- 4000-2500 ई.पू.
- अविनाशचन्द्र दास ने वेदों का रचनाकाल 25000 वर्ष पूर्व का माना है। ऋग्वेद (7/95/2) के एक मन्त्र में सरस्वती नदी का उल्लेख आता है, जिसके अनुसार सरस्वती नदी समुद्र में मिलती थी, लेकिन अब यह नदी लुप्त हो चुकी है। यह घटना ईसा से लगभग 25000 वर्ष पूर्व की है।

वैदिक काल निर्धारण में विभिन्न विद्वानों के मत निम्नलिखित हैं-

मैक्समूलर

वेदों की तिथि को निश्चित करने की दिशा में सर्वप्रथम मैक्समूलर ने प्रयास किया। उन्होंने कहा कि बौद्ध धर्म, ब्राह्मण धर्म की प्रतिक्रिया मात्र है। बौद्ध धर्म के उदय होने तक सम्पूर्ण वैदिक साहित्य की रचना की जा चुकी थी। उन्होंने वैदिक साहित्य को चार भागों में बांटा है- छन्दकाल, मन्त्रकाल, ब्राह्मणकाल और सूत्रकाल।

वेदों का रचनाकाल निर्धारित करने के लिए मैक्समूलर ने सर्वप्रथम अन्तिमकाल अर्थात् सूत्रकाल की तिथि निश्चित की। महात्मा बुद्ध का समय 500 ई.पू. का है। अतः सूत्र साहित्य का समय मैक्समूलर ने ईसा से 600 से 400 ई.पू. माना है। फिर उनके अनुसार ब्राह्मण साहित्य के विकास में कम से कम 200 वर्ष अवश्य लगे होंगे। अतः ब्राह्मण ग्रन्थों का रचनाकाल 800-600 ई.पू. का रहा होगा। ब्राह्मण ग्रन्थों की रचना से पूर्व वैदिक संहिताओं के सम्पादन में भी 200 वर्ष अवश्य लगे होंगे। अतः इनका रचनाकाल 1000 से 800 ई.पू. का रहा होगा।

किन्तु कुछ विद्वानों ने मैक्समूलर के इस मत की यह कहकर कड़ी आलोचना की है कि वैदिक साहित्य के प्रत्येक अंश के विकास की तिथि को स्वयं स्वीकारते हुए भी वे स्पष्ट रूप से नहीं बता सकते कि वैदिक मन्त्र ईसा से 1000, या 1500, या 2000, या 3000 वर्ष पूर्व रचे गए थे। पृथ्वी पर ऐसी कोई शक्ति नहीं है (जो यह निश्चित रूप से बता सके)।

ए. वेबर

जर्मन विद्वान ए. वेबर ने कहा है कि "वेदों का समय निश्चित नहीं किया जा सकता। वे उस स्थिति के बने हुए हैं, जहाँ तक पहुंचने के लिए हमारे पास उपयुक्त साधन नहीं हैं। वर्तमान प्रमाण-राशि हम लोगों को उस समय के उन्नत शिखर तक पहुंचाने में असमर्थ है।" उन्होंने यह भी कहा कि "वेदों के समय को कम-से-कम 1500 ई.पू. या 1200 ई.पू. के बाद का कथमपि स्वीकार नहीं किया जा सकता।" यह कथन उस वेद-विद्यार्थी का है जिसने अपना सम्पूर्ण जीवन वेदों के अध्ययन में ही व्यतीत कर दिया था।

जैकोबी

पं. जैकोबी ने ज्योतिष विज्ञान के आधार पर गणना करके पता लगाया कि ध्रुव तारे की जिस तेजस्वी स्थिति की उपमा कल्पसूत्र के विवाह-सम्बन्धी प्रकरण के वाक्य "ध्रुव इव स्थिरा भव" में दी गई है, वह स्थिति लगभग 2700 ई.पू. की है। इस आधार पर कल्पसूत्रों का समय 2700 ई.पू. निश्चित किया जा सकता है, और तदनुसार जैकोबी ने वेदों का रचनाकाल 4500 से 2500 ई.पू. का माना है।

बालगंगाधर तिलक

बालगंगाधर तिलक ने ज्योतिष के आधार पर वेदों का रचनाकाल निर्धारित किया। उन्होंने विभिन्न नक्षत्रों में 'वसन्त सम्पात' के आधार पर वैदिक भारतीय सभ्यता के प्रारम्भ का अनुमान लगाया। इसे उन्होंने चार भागों में बांटा है-

- **अदिति काल -** यह सबसे प्राचीन समय था, जब वसन्त-सम्पात पूर्णिमा नक्षत्र के समीप था। यह समय 6000 से 4000 ई.पू. का है। इसी समय भारतीय सभ्यता का प्रारम्भ हुआ।
- **मृगशिरा काल -** यह समय 2500 से 1400 ई.पू. का है। यही वह समय है, जब ऋग्वेद के प्राचीनतम मन्त्र लिखे गए।
- **कृत्तिका काल -** यह समय 1400 से 500 ई.पू. का है। इस समय चारों वेदों का लिपिबद्ध संकलन किया गया; इसी में तैत्तिरीय संहिता तथा कुछ अन्य ब्राह्मण ग्रन्थों की रचना भी हुई।
- **अन्तिम काल -** यह समय 500 ई.पू. के बाद का है। इसमें सूत्र ग्रन्थों तथा अनेक दार्शनिक ग्रन्थों का निर्माण हुआ।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर लोकमान्य तिलक ने वेदों का रचनाकाल 4000 से 2500 ई.पू. का निश्चित किया है।

एम. विण्टरनिट्ज

प्रसिद्ध विद्वान विण्टरनिट्ज ने ब्राह्मण ग्रन्थों, पाणिनि व्याकरण की संस्कृत भाषा तथा अशोक के शिलालेखों की भाषा --- इन सबकी वैदिक भाषा से समानता को ध्यान में रखते हुए कहा कि "किसी भी प्रामाणिक प्रमाण के अभाव में वेदों का रचनाकाल निश्चित करना सम्भव नहीं है। अतः हमारे लिए बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य यही है कि मध्यम मार्ग अपनाएं।" यह मध्यम मार्ग अपनाते हुए विण्टरनिट्ज ने वेदों का रचनाकाल 2500-2000 ई.पू. का माना है।

वैदिक काल निर्धारण में भारतीय परम्परागत विचार

प्राचीन भारतीय परम्परा के अनुसार वेदों को अपौरुषेय, अनादि और शाश्वत माना गया है। अतः उनका रचनाकाल निश्चित करने का प्रश्न ही नहीं उठता। इस मत के अनुसार समाधिस्थ ऋषियों के शुद्ध अन्तःकरण में मन्त्रों का प्रादुर्भाव हुआ; वे मन्त्रों के द्रष्टामात्र थे, स्रष्टामात्र नहीं-

"ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः न तु स्रष्टारः।"

वेदों की रचना का अर्थ है ब्रह्म के निःश्वास-रूप मन्त्रों का ध्यान रूपी नेत्रों से साक्षात्कार करना। चिरकाल तक गुरु-शिष्य परम्परा से इन मन्त्रों का मौखिक रूप से ही आदान-प्रदान होता रहा, इसी कारण इन्हें श्रुति भी कहा गया है। तत्पश्चात् अपने-अपने विषय एवं पुरोहिती \[होता (ऋग्वेद), अध्वर्यु (यजुर्वेद), उद्गाता (सामवेद), ब्रह्मा (अथर्ववेद)\] की आवश्यकतानुसार इन मन्त्रों को ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद नामक चार संहिताओं में संकलित कर दिया गया।

दयानन्द सरस्वती ने मन्त्रों के आधार पर वेदों का रचनाकाल सृष्टि का प्रारम्भिक युग माना है, क्योंकि पुरुषसूक्त में स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि यज्ञ-रूपी पुरुष ने ही वेदों की रचना की है।

संहिता साहित्य

संहिता अर्थात् 'सम्यक्' अथवा पूर्वापर रूप में संगृहीत साहित्यिक अथवा आचार-नियम सम्बन्धी सामग्री। इसीलिए संगृहीत और सुसम्पादित वैदिक साहित्य को संहिता कहा जाता है।

संहिता-साहित्यानुसार वैदिक युग का विभाजन

संहिता-साहित्य के अनुसार वैदिक युग को दो भागों में विभक्त किया जाता है।

- **पूर्व वैदिक युग-** सामान्यतः ऋक्-संहिता के रचनाकाल को पूर्व वैदिक काल कहते हैं। इसमें वेद की केवल चार संहिताएं सम्मिलित हैं।
- **उत्तर वैदिक युग -** अन्य संहिताओं एवं ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषदों के रचनाकाल को उत्तर वैदिक काल माना जाता है। इसमें ब्राह्मण ग्रन्थों से लेकर छः वेदांगों तक का समावेश है।

'वेद' का शब्दार्थ है ज्ञान; यह ज्ञान मन्त्रों में समाविष्ट है और इन्हीं मन्त्रों के संकलन को संहिता कहा जाता है। वेद चार हैं, अतः उनकी संहिताएं भी चार हैं। प्रत्येक वेद के चार भाग हैं- संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्। संहिता मन्त्रों का वह भाग है, जिसमें वेदस्तुति वर्णित है, एवं जिसे विभिन्न युगों में रचा गया माना जा सकता है। जहाँ तक संहिताओं की विषयवस्तु का प्रश्न है, कहा गया है-

"ऋक्-यजुः-सामाथर्वाख्यान् वेदान् पूर्वादिमिः श्रुतिः।
शस्त्रमिज्या स्तुतिस्तोमः प्रायश्चित्तं व्यदाहृतम्।।"

अर्थात् ऋक् का विषय है- 'शस्त्र'। 'शस्त्र' उसे कहते हैं जो मन्त्रों द्वारा उच्चारित होता है तथा जिसका गान नहीं किया जा सकता। यजुष् का विषय 'इज्या' अर्थात् यज्ञ है, तथा 'साम' का विषय है- 'स्तुति-स्तोम', अर्थात् स्तुति के लिए प्रयुज्यमान ऋचाओं का वह समुदाय, जो उद्गाता द्वारा गाया जाता है। और अथर्व का प्रतिपाद्य विषय है- 'प्रायश्चित्त'।

वैदिक साहित्य में संहिता साहित्य का विभाजन

वैदिक साहित्य में संहिताओं की संख्या चार है-

ऋग्वेद संहिता :

ऋग्वेद विश्व-साहित्य का प्राचीनतम ग्रन्थ है। यह विभिन्न देवताओं के स्तुतिपरक मन्त्रों का संकलन है और इसकी उत्पत्ति विराट पुरुष के मुख से मानी गई है। जिसके द्वारा देवता की स्तुति अथवा अर्चना की जाए, उसे ऋचा कहते हैं- "ऋच्यते स्तूयते यया इति ऋक्।" ऐसी ऋचाओं के संग्रह का नाम ही ऋग्वेद है। इसका पुरोहित 'होता' होता है, जो देवताओं का आह्वान करता था।

ऋग्वेद में 'ज्ञान' की महत्ता का प्रतिपादन किया गया है। ऐसा माना जाता है कि सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने वेदों का ज्ञान अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा नामक चार ऋषियों को प्रदान किया था; इसी कारण ऋषियों को मन्त्रों का द्रष्टा कहा गया है, स्रष्टा नहीं- "ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः न तु स्रष्टारः।" इन मन्त्रद्रष्टा ऋषियों ने गुरु-शिष्य परम्परा का निर्वाह करते

हुए इन मन्त्रों को अपने शिष्यों को दिया। चिरकाल तक इनका मौखिक रूप से ही सम्प्रेषण होता रहा। अतः ये मन्त्र श्रुति भी कहे गए, लेकिन बाद में जब यह ज्ञान विस्मृत होने लगा, तब इन्हें लिपिबद्ध कर दिया गया। इस प्रकार मन्त्रों का संग्रह किए जाने के कारण ही वेदों को 'संहिता' के नाम से जाना जाता है।

ऋग्वेद के मन्त्र 10 मण्डलों में तथा 1017 सूक्तों में विभाजित हैं। महाभाष्यकार पतंजलि ने ऋग्वेद की 21 शाखाएं मानी हैं- "एकविंशतिधा वाहृच्यम्", जिसमें शाकल, वाष्कल, आश्वलायनी, शांखायनी तथा माण्डूकायनी प्रमुख शाखाएं हैं।

यास्क ने निरुक्त में देवताओं को तीन भागों में विभाजित किया है-

- पृथ्वी-स्थानीय देवता -- अग्नि, सोम, पृथ्वी आदि
- अन्तरिक्ष-स्थानीय देवता -- इन्द्र, रुद्र आदि
- द्युस्थानीय देवता -- वरुण, मित्र, उषा, सूर्य आदि

ऋग्वेद में कुल 33 देवताओं की स्तुतियाँ की गई हैं, जिनमें इन्द्र तथा अग्नि का सर्वप्रथम स्थान है। ऋग्वेद में लगभग 20 सूक्त ऐसे हैं, जिन्हें संवाद-सूक्त कहा जाता है। इनमें प्रमुख सूक्त निम्नलिखित हैं-

संवाद	**सूक्त संख्या**
पुरुरवा-उर्वशी संवाद	10/95
इन्द्र-वरुण संवाद	4/42
यम-यमी संवाद	10/10
सरमा-पणि संवाद	10/108
इन्द्र-इन्द्राणी संवाद	10/86
विश्वामित्र-नदी संवाद	3/33
सौम-सूर्य संवाद	10/85
दैवगण-अग्नि संवाद	10/52

विषयवस्तु की दृष्टि से ऋग्वेद के समस्त सूक्तों को मुख्यतः दस वर्गों में रखा जा सकता है - देवता सूक्त, भूपद, कथा, संवाद, दानस्तुति, तत्वज्ञ, संस्कार, मान्त्रिक, लौकिक तथा आप्री सूक्त। कुछ विद्वानों ने इन्हें - ऋषिसूक्त, देवतासूक्त, अर्थसूक्त तथा छन्दसूक्त, इन चार विभागों में रखा है।

यजुर्वेद संहिता :

यजुर्वेद का प्रतिपाद्य विषय यज्ञिक कर्मकाण्ड है तथा इसका ऋत्विक अध्वर्यु है। यजुर्वेद संहिता के मुख्य देवता वायु हैं और आचार्य वेदव्यास के शिष्य वैशम्पायन हैं। महाभाष्य, चरणव्यूह एवं पुराणों के अनुसार यजुर्वेद की 101, 109, 86 आदि शाखाओं का पता चलता है। यजुर्वेद संहिता यजुषों का संग्रह है। यजुर्वेद का अर्थ है - 'यजुषां वेद'। यजुष का अर्थ है - 'इज्यते अनेन इति यजुः' अर्थात् जिन मन्त्रों का छन्द नियत न हो। इसके अतिरिक्त - 'गद्यात्मको यजुः' अर्थात् जिसमें अक्षरों की संख्या नियत न हो, तथा 'शेष यजुः' शब्द का भी तात्पर्य यही है कि ऋचा और साम से भिन्न गद्यात्मक मन्त्रों का अभिधान 'यजुष' है।

यजुर्वेद संहिता की दो शाखाएँ हैं - शुक्ल यजुर्वेद एवं कृष्ण यजुर्वेद, और इनकी भी निम्नलिखित शाखाएँ प्रसिद्ध हैं।

- **शुक्ल यजुर्वेद -** वाजसनेयी या माध्यन्दिन और काण्व शाखा।
- **कृष्ण यजुर्वेद -** तैत्तिरीय, मैत्रायणी, कठ और कपिष्ठल शाखा।

यजुर्वेद के वर्ण्य-विषय का ज्ञान मात्र वाजसनेयी संहिता के अध्ययन से हो सकता है, क्योंकि यह संहिता यजुर्वेद की प्रतिनिधि है। इसमें मुख्य रूप से वैदिक कर्मकाण्ड का ही प्रतिपादन है तथा इसमें 40 अध्याय हैं। इसमें से 1 से 25 अध्याय तक महान यज्ञों का वर्णन है, लेकिन 14वाँ अध्याय 'खिल' नाम से प्रसिद्ध होने के कारण आवान्तरयुगीन माना जाता है। इसका 34वाँ अध्याय 'शिवसंकल्प सूक्त' और 40वाँ अध्याय 'ईशावास्योपनिषद्' के नाम से प्रसिद्ध है। यही एकमात्र वह सर्वप्राचीन उपनिषद् है जो संहिता का भाग है। इस विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि यजुर्वेद का मुख्य प्रतिपाद्य विषय विभिन्न यज्ञों का सम्पादन ही है। तैत्तिरीय शाखा में 7 काण्ड, 44 प्रपाठक और 631 अनुवाक हैं। मैत्रायणी शाखा में 4 काण्ड, 54 प्रपाठक और 211 मन्त्र हैं। कठ शाखा में 40 स्थानक और 843 अनुवाक हैं। कपिष्ठल शाखा में 8 अष्टक और 48 अध्याय हैं।

सामवेद संहिता :

साम का अर्थ है - 'गान'। ऋग्वेद के मन्त्र जब विशिष्ट गान-पद्धति से गाए जाते हैं, तो उन्हें साम कहा जाता है। वस्तुतः ऋग्वेद की ऋचाओं का लयबद्ध गान ही साम है।

वर्तमान में कौथुमीय, राणायनीय तथा जैमिनीय - ये तीन शाखाएँ उपलब्ध हैं। सामवेद को दो भागों में विभक्त किया गया है --- **पूर्वार्चिक तथा उत्तरार्चिक।** यहाँ 'आर्चिक' से अभिप्राय ऋचाओं के संग्रह से है। पूर्वार्चिक में कुल छह प्रपाठक हैं तथा उत्तरार्चिक में नौ। इन प्रपाठकों का विभाजन अध्यायों और खण्डों में हुआ है। प्रत्येक खण्ड में एक देवता या एक छन्द वाली ऋचाएँ हैं।

पूर्वार्चिक का प्रथम प्रपाठक अग्नि से सम्बद्ध होने के कारण 'अग्निपर्व' या 'आग्नेयपर्व' भी कहा जाता है। द्वितीय से चतुर्थ प्रपाठकों में इन्द्र से सम्बन्धित ऋचाएँ हैं, जिन्हें 'ऐन्द्रपर्व' कहा जाता है। पंचम प्रपाठक का सम्बन्ध पवमान (सोम) से है, जिसे 'पवमानपर्व' कहते हैं। षष्ठ प्रपाठक को 'अरण्यपर्व' की संज्ञा दी गई है, क्योंकि इस प्रपाठक की ऋचाएँ अरण्यगान के ही योग्य हैं; जबकि प्रथम पाँच प्रपाठकों तक की ऋचाओं को ग्रामों में गाया जा सकता है, जिन्हें 'ग्रामगान' कहते हैं। गान चार प्रकार के होते हैं - ग्रामगेय गान, अरण्यगान, ऊहगान और ऊह्य (रहस्य) गान।

सामवेद में सामविकार भी पाए जाते हैं, जिनमें गान करते समय कुछ घटाया-बढ़ाया भी जाता है। ये छह प्रकार के होते हैं - विकार, विश्लेषण, विकर्षण, अभ्यास, विराम और स्तोभ।

'प्रस्ताव' मन्त्र का प्रारम्भिक भाग होता है, जिसे 'प्रस्तोता' नामक ऋत्विक गाता है। 'उद्गीथ' साम का प्रधान भाग है, जिसे 'उद्गाता' गाता है; इसमें प्रारम्भ में 'ॐ' लगाया जाता है। 'प्रतिहार' का अर्थ है --- दोनों भागों को जोड़ने वाला अंश।

'प्रतिहार' को 'प्रतिहर्ता' नामक ऋत्विक गाया करता है। 'उपद्रव' इसे 'उद्गाता' नामक ऋत्विक गाता है। 'निधन' में मन्त्र का दो पादांश या 'ॐ' रहता है। इसका गायन तीनों ऋत्विक (प्रस्तोता, उद्गाता एवं प्रतिहर्ता) एक साथ करते हैं।

Unleash the topper in you

अथर्ववेद संहिता :

अथर्ववेद का अर्थ है - अथर्वा का वेद अथवा अभिचार मन्त्रों का ज्ञान। अथर्वन ऋषि के नाम पर इस वेद का नाम अथर्ववेद पड़ा। इसे भृगुवांगिरा वेद, अथर्वांगिरोवेद, भेषजवेद, क्षत्रवेद तथा ब्रह्मवेद के नाम से भी जाना जाता है। इसका ऋत्विक ब्रह्मा है।

अथर्ववेद की नौ शाखाएँ हैं - पिप्पलाद, स्तौद, मौद, शौनकीय, जाजल, जलद, ब्रह्मवद, देवदर्श तथा चारणवैद्य। इनमें से सम्प्रति केवल पिप्पलाद और शौनकीय - यही दो शाखाएँ प्राप्त होती हैं। इसमें 20 काण्ड, 730 सूक्त और लगभग 6,000 मन्त्र हैं। जीवन को सुखमय तथा दुःखरहित बनाने के लिए जिन दो साधनों की आवश्यकता होती है, उनकी सिद्धि के लिए नाना प्रकार के अनुष्ठानों का विधान इस वेद में किया गया है। संहिता के प्रारम्भिक 13 काण्डों का विषय जरण, मरण, उच्चाटन आदि से सम्बन्धित है। 14वें काण्ड में विवाह, 18वें काण्ड में श्राद्ध तथा 20वें काण्ड में सोमयाग से सम्बन्धित मन्त्र दिए गए हैं; जबकि 19वें काण्ड में राष्ट्रवृद्धि एवं आध्यात्मपरक सूक्त हैं।

अथर्ववेद की विषय-वस्तु के कुछ सूक्त निम्नलिखित हैं ---

- **भैषज्य सूक्त -** इनमें रोग, रोगी के लक्षण, निदान एवं जड़ी-बूटियों इत्यादि का 145 सूक्तों में विवेचन किया गया है।
- **आयुष्य सूक्त -** इनमें स्वास्थ्य एवं दीर्घ जीवन-सम्बन्धी प्रार्थनाओं का वर्णन है। इनका प्रयोग पारिवारिक उत्सवों के अवसर पर होता है।

- **पौष्टिक सूक्त -** इन सूक्तों में कृषिकर्म, कृषक, व्यापारिक कार्य, चरवाहे और यहाँ तक कि द्यूत-क्रीड़ा में विजय प्राप्त करने की प्रार्थनाएँ की गई हैं।
- **व्यंजक सूक्त -** इन्हें 'प्रसाद सूक्त' भी कहा जाता है। इनमें भय से सुरक्षा, बुराई से बचने, आशीर्वाद एवं प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए प्रार्थनाएँ हैं।
- **प्रायश्चित सूक्त -** इन सूक्तों में प्रायश्चित का विधान है तथा विभिन्न अपराधों के निवारक मन्त्र हैं।
- **स्त्रीकाम सूक्त -** इनमें विवाह एवं प्रेम का निर्देश करने वाले, पति-पत्नी में अनुराग विकसित करने वाली औषधियों व मन्त्रों के बल से अपने प्रेमी को वश में करने वाले, तथा सपत्नी-मर्दन करने वाले मन्त्र हैं। इन्हें 'प्रेम सूक्त' भी कहा गया है।
- **राजकर्म सूक्त -** ये सूक्त राजाओं एवं उनकी प्रजाओं से सम्बन्धित हैं। शत्रु को परास्त करने की प्रार्थनाएँ तथा संग्राम-सम्बन्धी दुन्दुभि, शंख आदि अनेक साधनों का विवेचन इस सूक्त में प्राप्त होता है।
- **याज्ञिक सूक्त -** अथर्ववेद के 20वें काण्ड में कुछ यज्ञ-सम्बन्धी मन्त्र भी हैं, जो सोमयाग का वर्णन करते हैं। ये स्तुतिपरक मन्त्र ऋग्वेद से लिए गए हैं।
- **कुन्ताप सूक्त -** ये 20वें काण्ड में पाए जाते हैं, इनमें राष्ट्र-सम्बन्धी दान-स्तुतियाँ, राजाओं और यजमानों की उदारता की प्रशंसा, तथा अनेक पहेलियाँ और उनके समाधान हैं।
- **अभिचार सूक्त -** इन सूक्तों में दैत्य, राक्षस, शत्रु आदि के उद्देश्य से किए जाने वाले विविध अभिचार तथा उनकी विधियाँ वर्णित हैं।
- **दार्शनिक सूक्त -** अथर्ववेद के अनेक सूक्तों में ब्रह्म, विराट्, माया, ईश्वर, स्वात्मा, एकेश्वरवाद, जीवात्मा, प्रकृति, पुनर्जन्म, स्वर्ग-नर्क आदि का वर्णन है।
- इसके अतिरिक्त इसमें भूमि सूक्त, प्रसाद सूक्त, सौमनस्य सूक्त आदि का भी वर्णन मिलता है।

संहिता एवं उनके ऋत्विक

- ऋग्वेद - होता
- सामवेद - उद्गाता
- यजुर्वेद - अध्वर्यु
- अथर्ववेद - ब्रह्मा

छन्दों के संहिता-रूप में संग्रह के पश्चात् वैदिक साहित्य में ब्राह्मण ग्रन्थों का स्थान है। ये ब्राह्मण ग्रन्थ वैदिक संस्कृति व दर्शन को समझने के लिए अपरित्याज्य हैं। इनके महत्त्व और प्राचीनता का अनुमान इससे स्पष्ट है कि अनेक ग्रन्थों में वैदिक संहिताओं की भाँति इन्हें भी 'श्रीवेद' कहकर पुकारा गया है। 'मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्' अर्थात् मन्त्र और ब्राह्मण दोनों को ही 'वेद' नाम दिया गया है।

संवाद सूक्त

ऋग्वेद सबसे प्राचीनतम ग्रन्थ है। इसमें लगभग 20 सूक्त हैं, जिन्हें 'संवाद सूक्त' के नाम से जाना जाता है। इन सूक्तों में से प्रमुख सूक्त निम्नलिखित हैं ---

ऋग्वेद के प्रमुख संवाद सूक्त

ऋग्वेद के प्रमुख संवाद सूक्तों का वर्णन निम्नलिखित है -

पुरूरवा-उर्वशी सूक्त का सारांश :

पुरूरवा-उर्वशी, ऋग्वेद के दशम मण्डल का 95वाँ सूक्त है, जिसमें कुल 18 मन्त्र हैं। इसमें पुरूरवा और उर्वशी की प्रेम-कथा वर्णित है। पुरूरवा एक मनुष्य है और उर्वशी एक अप्सरा। दोनों चार वर्ष तक एक साथ रहते हैं। उनके 'आयुष' नामक एक पुत्र भी होता है, किन्तु उसके पश्चात् शाप के प्रभाव से उर्वशी के साथ मिलन की यह अवधि समाप्त हो जाती है और वह सहसा लुप्त हो जाती है।

शोकविह्वल होकर उसे खोजने में प्रयत्नशील पुरूरवा सरोवर के तट पर सखियों के साथ उर्वशी को देखता है। वह उसे साथ चलने के लिए कहता है, किन्तु पुरूरवा को शाप की बात बताकर उर्वशी अपनी असमर्थता प्रकट करती है और लुप्त हो जाती है। यह संवाद शतपथ ब्राह्मण, विष्णुपुराण और महाभारत में भी प्राप्त होता है। इसी संवाद को कालिदास ने अपने नाटक 'विक्रमोर्वशीयम्' का कथानक बनाया।

पुरूरवा-उर्वशी संवाद सूक्त के मन्त्र निम्नलिखित हैं। ऋग्वेदस्थ मूल संवाद-सूक्त 1-18 तक हैं।

"ऋषि - पुरूरवा ऐल और उर्वशी देवता - उर्वशी और पुरूरवा छन्द - त्रिष्टुप् स्वर – धैवत"

पुरूरवा-उर्वशी संवाद सूक्त :

पुरूरवा-उर्वशी संवाद सूक्त में उल्लिखित मन्त्र निम्नलिखित हैं ---

पुरूरवसि राजर्षे वर्षमरा उर्वशी पुरा।
न्यवसत् संविदं कृत्वा तस्मिन् धर्मं चचार च।।

व्याख्या -

प्राचीनकाल में उर्वशी नाम की अप्सरा, पुरूरवा नाम के राजर्षि के साथ रही। नियमपूर्वक वह उसके साथ लोकधर्म में प्रवृत्त हुई।

स तयोस्तु वियोगार्थं पार्श्वस्थं वज्रम् अब्रवीत्।
प्रीतिं भिन्धि तयोर्वज्र समं चेदिच्छसि प्रियम्।।

व्याख्या -

उस इन्द्र ने उन दोनों अर्थात् पुरूरवा और उर्वशी का वियोग कराने के लिए पार्श्वस्थ वज्र से कहा - 'हे वज्र! यदि मेरा प्रिय चाहते हो, तो उन दोनों का प्रेम तोड़ दो।'

यमी अपने भाई के कथन का यह कहकर तिरस्कार कर देती है कि देवता चाहते हैं कि मनुष्य-जाति की अभिवृद्धि के लिए यम अपनी बहन के साथ सम्बन्ध स्थापित करे। लेकिन यम पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

सम्भवतः इसी कारण से न केवल हिन्दुओं में, अपितु संसार के किसी भी कोने में सगोत्र भाई-बहन का विवाह अनुचित समझा जाता है। इस सूक्त की प्रतिपादन-शैली अत्यन्त रमणीय है।

ऋषि - यमी वैवस्वती, यम वैवस्वत देवता - यम वैवस्वत, यमी वैवस्वती छन्द - त्रिष्टुप् स्वर - धैवत

यम-यमी संवाद सूक्त

यम-यमी संवाद सूक्त में उल्लिखित मन्त्र निम्नलिखित हैं ---

ओ चित् सखायं ववृत्यां तिरः पुरु चिदर्णवः जगन्वान्।
पितुर्नपातमा दधीत वेधा अधि क्षमि प्रतरं दीध्यान्।।

व्याख्या -

यमी अपने सहोदर भाई यम से कहती है - 'विस्तृत समुद्र के मध्य द्वीप में आकर, इस निर्जन प्रदेश में भी तुम्हारा सहवास (मिलन) चाहती हूँ, क्योंकि माता की गर्भावस्था से ही तुम मेरे साथी हो। विधाता ने मन में यह सोचा है कि तुम्हारे द्वारा मेरे गर्भ से जो पुत्र उत्पन्न होगा, वह हमारे पिता का एक श्रेष्ठ नाती होगा।'

उशन्ति घा ते अमृतासः एतद् एकस्य चित् त्यजसं मर्त्यस्य।

नि ते मनो मनसि धायि अस्मे जन्युः पतिः तन्वा विविश्याः।।

व्याख्या -

यमी ने कहा - 'यद्यपि मनुष्य के लिए ऐसा संसर्ग निषिद्ध है, तो भी देवता लोग इच्छापूर्वक ऐसा संसर्ग करते हैं। अतः मेरी इच्छा के अनुकूल तुम भी करो। पुत्र-जन्मदाता पति के समान मेरे शरीर में प्रवेश करो (मेरा सम्भोग करो)।'

गर्भे नु नैजनिता दम्पती करदेवः त्वष्टा सविता विश्वरूपः।

नाकिरस्य प्र मिनन्ति व्रतानि वेद नावस्य पृथिवी उत द्यौः।।

व्याख्या -

यमी ने कहा - 'रूपकर्ता, शुभाशुभ-प्रेरक, सर्वात्मक, दिव्य और जनक प्रजापति ने तो हमें गर्भावस्था में ही दम्पति बना दिया है। प्रजापति के इस कर्म को कोई लुप्त नहीं कर सकता। हमारे इस सम्बन्ध को द्यावा-पृथ्वी भी जानते हैं।'

यमस्य मा यम्यं काम आगन् समाने योनौ सहशेय्याय।

जायेव पत्ये तन्वं रिरिच्यां वि चिद् वृहेव रथ्येव चक्रा।।

व्याख्या -

यमी ने कहा - 'जैसे एक शय्या पर पत्नी अपने पति के साथ अपनी देह का उद्घाटन करती है, वैसे ही तुम्हारे समक्ष मैं अपने शरीर को प्रकट कर देती हूँ। तुम मेरी अभिलाषा पूर्ण करो। आओ, हम दोनों एक ही स्थान पर शयन करें --- जैसे रथ के दोनों चक्र एक ही कार्य में संलग्न रहते हैं, वैसे ही हम भी एक कार्य में प्रवृत्त हों।'

सरमा ने कहा - हे पणियों! किसी विस्तृत स्थान पर चले जाओ। छिपी हुई गायें चट्टानों के आवरण को तोड़ती हुई सत्य नियम के अनुकूल बाहर निकलें, जिनको बृहस्पति ने ढूंढ निकाला है, तथा जिनका सोम ने, पत्थरों ने तथा बुद्धिमान ऋषियों ने पता लगाया है।

विश्वामित्र - नदी सूक्त का सारांश :

विश्वामित्र-नदी, ऋग्वेद के तीसरे मण्डल का 33वाँ सूक्त है, जिसमें कुल 13 मन्त्र हैं। भरतवंशी विश्वामित्र सुदास से पौरोहित्य कर्म का धन लेकर अपने गन्तव्य मार्ग के लिए जाने लगा तो अन्य लोग भी उसका अनुकरण करने लग जाते हैं। रास्ते में नदियों में बाढ़ आ जाने के कारण उन्हें पार करना मुश्किल था। 13 मन्त्रों में विश्वामित्र द्वारा शुतुद्री और विपाट् नदियों से मार्ग देने के लिए प्रार्थना की गई है।

- ऋषि - विश्वामित्र देवता - नदियाँ (विपाट्, शुतुद्री)
- छन्द - पंक्ति, त्रिष्टुप्, उष्णिक्
- स्वर - 1, 7, 5 पंचम्; 2, 4, 6, 8, 9, 10, 11, 12 धैवत्; 13 ऋषभ

विश्वामित्र - नदी संवाद सूक्त :

विश्वामित्र - नदी संवाद सूक्त में उल्लिखित मन्त्र निम्नलिखित हैं:

प्र पर्वताना मुशती उपस्थादश्वे इव विषिते हासमाने।

गावेव शुभ्रे मातरा रिहाणे, विपाट् शुतुद्री पयसा जवेते।।

व्याख्या :

पर्वतों की गोद से निकलकर समुद्र की ओर जाने की इच्छा करती हुई (परस्पर) स्पर्धा से दौड़ती हुई, खुले बाग वाली दो घोड़ियों की तरह (बछड़े) को चाटती हुई दो सफेद माता गायों की तरह विपाट् और शुतुद्री (अपने) प्रवाह से तेजी से बह रही हैं।

अच्छा सिन्धुं मातृमाम्यासं, विपाशमुर्वीं सुभगामगन्म।

वत्समिव माता स्नुहिणे, समानं योनिमनु संचरन्ती।।

व्याख्या :

श्रेष्ठ नदी माता (शुतुद्री) के पास आया हूँ। चौड़ी तथा सुन्दर विपाट् के पास आया हूँ। बछड़े को चाटती हुई दो माताओं की तरह, एक ही स्थान (समुद्र) को लक्ष्य करके बहती हुई (शुतुद्री और विपाट्) के पास आया हूँ।

रथेव मे वचसे सौम्याय, ऋतावरीरूप महूर्तमेवैः।

प्र सिन्धुमच्छा बृहती मनीषा - वस्युरहे कुशिकस्य सूनुः।।

व्याख्या :

हे पवित्र जलवाली (नदियो)! सोम-आप्लावित मेरे वचनों के प्रति अपनी यात्रा से क्षणभर के लिए रुक जाओ। अपनी सहायता का इच्छुक, कुशिकपुत्र मैंने ऊँची स्थिति से नदी (शुतुद्री) का आह्वान किया है।
नदियों का समर्पण चाहती हूँ।

उद्ध ऊर्मिः शय्या हनुवापो योक्त्राणि मुच्यत।

मा दुष्कृतो व्येनसाध्न्यो शूनमारताम्।।

व्याख्या :

तुम्हारी धारा जुवा की कील के नीचे से बहे। जल रस्सी को छोड़ दे। दुष्कृतों से रहित, पापरहित तथा तिरस्कार न करने योग्य (ये नदियाँ) वृद्धि न प्राप्त करें।

अतारिष्म भरता गव्यवः विप्राः सुमतिं नदीनाम्।

प्र पिन्वध्वमिषयन्तीः सुराधा, आ वः शमः पृणध्वं यात शीघ्रम्।।

व्याख्या :

पार जाने की इच्छा वाले भरतवंशियों ने पार कर लिया। ब्राह्मण ने नदियों का सुमर्पण प्राप्त कर लिया। सुन्दर धनवाली (तुम लोग) धन लाती हुई अपनी जगह पर प्रवाहित होओ; भर जाओ; शीघ्रता से बहो।

इन्द्रो अस्माँ अरदद्वज्रबाहुः, अपाहन्वृत्रं परिधिं नदीनाम्।

देवोऽनयत्सविता सुपाणिस्तस्य वयं प्रसवे याम उर्वीः।।

व्याख्या :

वज्रधारी इन्द्र ने हमें खोदकर बाहर किया। उसने नदियों के घेरने वाले वृत्र को मारा। सुन्दर हाथों वाले सविता देव हम लोगों को ले गए। हम जितनी चौड़ी हैं, उसकी आज्ञा से निरन्तर बहती हैं।

प्र वाच्यं शाश्वधा वीर्यं तद्, इन्द्रस्य कर्म यदहिं विवृश्चत्।

वि वज्रेण परिषदो जघान - अन्नोपोऽयनमिच्छमानाः।।

व्याख्या :

इन्द्र का वह पराक्रमयुक्त कार्य, जो उसने अहि को मारा, अक्षय कहने योग्य है। उसने वज्र से (जल के) प्रतिबन्धकों को काट डाला। जल अपना मार्ग खोजता हुआ प्रवाहित हुआ।

ओ षु स्वसारः कारवे शृणोत, ययौ वो दूरादनसा रथेन।

नि षू नमध्वं भवता सुपारा, अधो अक्षा: सिन्धवः श्रोत्यामिः।।

व्याख्या :

हे सुन्दर बहनों! (मुझे) कवि की बात सुनो; क्योंकि मैं तुम्हारे पास बहुत दूर से गाड़ी तथा रथ से आया हूँ। अच्छी तरह झुक जाओ। हे नदियों! अपनी जलधारा से अक्ष के नीचे होकर (बहती हुई) आसानी से पार करने योग्य हो जाओ।

यदङ्ग त्वा भरताः संतरेयुर्गव्यन्-ग्राम ईषित इन्द्रजूतः।

अर्षादह प्रसवः सर्गतक्त, आ वो वृणे सुमतिं यज्ञियानाम्।।

व्याख्या :

हे नदियों चूँकि (तुम्हारी अनुमति मिल गई है इसलिए) भरतवंशी (हम लोग) तुम्हें पार करें, पार जाने की इच्छा वाला (तुम्हारे द्वारा) अनुज्ञात एवं इन्द्र द्वारा भेजा गया (भरतवंशियों का) झुंड (पार करे), (तुम्हारा) प्रवाह अपनी स्वाभाविक गति में प्रवाहित होता हुआ बहे।

ब्राह्मण साहित्य

ब्राह्मण दोनों का नाम वेद है। यहाँ पर इनका शाब्दिक अर्थ ग्राह्य नहीं है। वेद तो मूल ग्रन्थ है और ब्राह्मण ग्रन्थ उनके व्याख्यापरक ग्रन्थ हैं, जो मन्त्र संहिताओं में दिए गए हैं। ब्राह्मण ग्रन्थ उनकी व्याख्या करते हैं। ब्राह्मण ग्रन्थों को वेद इसलिए कह दिया गया है, क्योंकि इन ग्रन्थों के बिना वेद को समझना कठिन है।

ब्राह्मण शब्द 'बृहद् वचन्' से निष्पन्न है, जिसका अर्थ है बढ़ाना। ब्रह्मन् का अर्थ मन्त्र भी है।

वस्तुतः ब्राह्मण शब्द का अर्थ है - 'यज्ञ के विविध विधानों में पूर्ण निपुणता रखने वाले पुरोहित वर्ग के द्वारा यज्ञों के अनुष्ठान के अवसर पर प्रयोग में लाई जाने वाली संहिता भाग की विधियों की व्याख्या का संकलन।' यही अर्थ सबसे समीचीन है क्योंकि यह ब्राह्मणों के मुख्य विषय को अपने अन्दर समाहित कर लेता है। ये ब्राह्मण ग्रन्थ मन्त्रों और याज्ञिक कर्मों का पारस्परिक सम्बन्ध जोड़ते हुए स्वतन्त्र रूप से विधि-विधानों का निर्देश करते हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थों का वर्ण्य विषय

वाचस्पति मिश्र के अनुसार, ब्राह्मण ग्रन्थों का वर्ण्य-विषय निर्वचन, मन्त्रों का विनियोग, अर्थवाद और विधि है। वर्ण्य विषय की दृष्टि से ब्राह्मण ग्रन्थों के तीन भाग हैं - विधि, अर्थवाद और उपनिषद्, जिनका वर्णन निम्नलिखित है।

विधि : विधि का अर्थ है नियम या सिद्धान्त। इस भाग में याज्ञानुष्ठान सम्बन्धी विधियों का वर्णन है और तत्पश्चात् उससे प्राप्त होने वाले फल का भी निरूपण किया गया है।

ये विधियाँ दो प्रकार की हैं -

अप्रवृत्त-प्रवर्तनम् - जो यज्ञ न करने वाले को यज्ञ करने के लिए प्रेरित करती है।

अज्ञात-ज्ञापनम् - जो अज्ञात का ज्ञान करवाती है। विधि-वाक्य धर्म के लिए प्रमाण माने गए हैं।

अर्थवाद :

अर्थवाद का अर्थ है प्रशस्तिपूर्ण व्याख्या। ये व्याख्यात्मक अंश हैं। यह भाग बतलाता है कि अमुक यज्ञ करने से अमुक फल की प्राप्ति होगी। इसमें आख्यानों द्वारा गूढ़ से गूढ़ अर्थों को समझाया गया है।

उपनिषद् :

उपनिषद् में ब्रह्मतत्व के बारे में विचार किया गया है। 'शाबर-भाष्य' में ब्राह्मणों के प्रतिपाद्य विषय के रूप में विधि के अन्तर्भूत दस वस्तुओं का उल्लेख किया गया है।

विधिर्विनियोगो निन्दा प्रशंसा संशयौ विधिः।

पुराकल्पो व्यवधारणा-कल्पना। उपमानं दृष्टान्तो विद्यो ब्राह्मणस्य तु।।

परन्तु इनमें विधि, विनियोग, निन्दा, अर्थवाद, निरुक्ति तथा आख्यान की ही प्रधानता है। इनमें से भी 'विधि' सर्वप्रमुख है।

ब्राह्मण ग्रन्थों की विशेषताएँ

ब्राह्मण-ग्रन्थों की विशेषताओं का वर्णन निम्न बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट है:

यज्ञ का महत्त्व :

प्रायः सभी ब्राह्मण-ग्रन्थों का प्रतिपाद्य विषय सामान्यतः यज्ञ को ही सर्वोपरि और सर्वश्रेष्ठ बतलाया गया है -

'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म।'

ऐसे सब देवताओं की आत्मा कहा गया है -

'यज्ञो वै देवानां महः।'

बड़े-बड़े देवता जैसे प्रजापति, विष्णु, आदि यज्ञ के समान ही माने गए हैं -

'यज्ञोऽसौ स आदित्यः।'

ऋग्वेद के यज्ञ किसी अभीष्ट को प्राप्त करने का साधन मात्र थे, परन्तु ब्राह्मण ग्रन्थों में यह साध्य बन गया, प्रत्येक व्यक्ति के लिए यज्ञ करना आवश्यक था। ऋग्वेद में यज्ञ देवताओं को प्रसन्न करने के लिए किए जाते थे, लेकिन ब्राह्मण में यज्ञ को ही देवता के रूप में वर्णित किया जाने लगा। ऐसा विश्वास किया जाने लगा कि यज्ञ करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है।
इससे पता चलता है कि इस समय साहित्यिक बागडोर ब्राह्मणों के हाथों में आ गई थी। ये ब्राह्मण स्वयं यज्ञ करने वाले पुरोहित थे।

चार वर्ण :

ब्राह्मण काल में समाज चार वर्णों में विभाजित था - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। ब्राह्मणों को अग्नि जैसा पवित्र और तपस्वी, पृथ्वी का देवता स्वीकार किया गया,
जिसे मृत्युदण्ड नहीं दिया जाता था एवं अपनी तपस्विता को बनाए रखने के लिए यज्ञ करना आवश्यक माना गया। यज्ञ करना ही अन्य मुख्य काम था, जिसे उनका आयुध माना गया। क्षत्रिय राष्ट्र की शक्ति थी। वैश्य व्यापार करके राष्ट्र की समृद्धि में वृद्धि करते थे। शूद्र तपस्या के रूप में वर्णित किए गए हैं, जिनका शारीरिक श्रम ही उनकी तपस्या है।

स्त्रियों की अवस्था :

स्त्रियों को श्री और समृद्धि के समान बतलाकर गृहलक्ष्मी के पद पर प्रतिष्ठित किया गया है। इसे मनुष्य की अर्धांगिनी बताया है और पत्नी के बिना मनुष्य यज्ञ का अधिकारी नहीं होता। स्त्रियों के चंचल स्वभाव की निन्दा की गई है। चरित्रहीन व कुटिल स्त्रियों को आदर्श की दृष्टि से नहीं देखा जाता था। स्त्रियों की अवस्था ब्राह्मण काल में अच्छी थी।

नैतिकता :

सत्य को सबसे अधिक महत्त्व दिया जाता था, असत्य को महापाप बताया गया है। मनुष्य को सत्य बोलने को कहा गया है। सत्य का पालन करके मनुष्य स्वर्गलोक को प्राप्त करता है। अभिमान की निन्दा की गई है। मनुष्य को अभिमान नहीं करना चाहिए क्योंकि यह पराभव का कारण होता है।

धर्म :

ब्राह्मण ग्रन्थों में धार्मिक अवस्थाएँ ऋग्वेद से काफी भिन्न हो गई थीं। कुछ देवता जो ऋग्वेद में उच्च कोटि के थे, ब्राह्मण ग्रन्थों में गौण रूप में आ गए, और जो ऋग्वेद में गौण रूप में थे, वे ब्राह्मण ग्रन्थों में उच्च कोटि के माने जाने लगे। जैसे ब्राह्मण ग्रन्थों में अग्नि का स्थान निम्न और प्रजापति का स्थान महत्वपूर्ण हो गया। विष्णु, शिव, रुद्र भी ब्राह्मण ग्रन्थों में महत्वपूर्ण देवता बन गए। ऋग्वेद में असुर देवता माना जाता था, जो ब्राह्मण ग्रन्थों में दैत्य बन गया। ब्राह्मण ग्रन्थों में यज्ञ साधन न होकर साध्य बन गया।

व्युत्पत्तियाँ :

ब्राह्मण ग्रन्थों में शब्दों की व्युत्पत्तियाँ दी गई हैं जो भाषा, विज्ञान और व्याकरण की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। 'उलूखल' की व्युत्पत्ति दी गई है 'उरुःकरोतीति' अर्थात् जो वस्तु को विस्तृत कर देता है।

'आज्य' की व्युत्पत्ति - याद आजिम आयन तद् आज्यानाम् आज्यत्वम्। अर्थात् जो यज्ञ रूपी युद्ध पर सवार है वही घी का आज्यत्व है।

'दुहिता' की व्युत्पत्ति - 'दूरे हिता अपति' या 'दोग्धि वा'। अर्थात् जो विवाह के बाद दूरी पर रखी जाती है, या जो जब तक घर में रहती है, गाय का दोहन करती है।

आख्यान और उपाख्यान :

ब्राह्मण ग्रन्थों में अनेक प्रकार के आख्यान और उपाख्यान पाए जाते हैं जो यज्ञ का कारण बतलाने के हेतु कहे गए हैं। उदाहरणस्वरूप प्रजापति को 'क' क्यों कहते हैं, इसे स्पष्ट करने के लिए तैत्तिरीय ब्राह्मण में एक आख्यान दिया गया है। मैक्समूलर के अनुसार ब्राह्मण ग्रन्थों के मुख्य आख्यान का केन्द्र वे आख्यान और उपाख्यान हैं जो उनमें प्राप्त होते हैं। ऐतरेय ब्राह्मण में शुनःशेप आख्यान, शतपथ ब्राह्मण में पुरूरवा-उर्वशी आख्यान, दुष्यन्त-शकुन्तला, प्रलयवार्ता-सोम, वशिष्ठ-विश्वामित्र, देवताओं द्वारा रात्रि निर्माण का आख्यान तथा सृष्टि विषयक अनेक आख्यान प्राप्त होते हैं। यही आख्यान बाद में इतिहास पुराणों के मूल स्रोत बने।

स्वर्ग और नरक सम्बन्धी सिद्धान्त :

ब्राह्मण ग्रन्थों में मृत्यु के बाद दो मार्ग बताए गए हैं - पितृयान और देवयान। यद्यपि इस मृत्युलोक में जन्म लेना बुरा नहीं माना गया, फिर भी यज्ञ करके स्वर्ग प्राप्ति पर बल दिया गया है। जनसाधारण में यह विश्वास दृढ़ हो गया था कि पुत्ररहित व्यक्ति की कोई भी लोक-प्राप्ति नहीं होती, पुत्राभाव में अन्त्येष्टि पिण्डदान करने वाले के अभाव में प्राणी की सद्गति नहीं होती। यह विश्वास आज भी सर्वव्यापी है, लेकिन वेदों में इस प्रकार का कोई संकेत प्राप्त नहीं होता। वैदिक आर्य इहलौकिक सुखों की पूर्ति के प्रति अधिक चिन्तित थे। परलोक की चिन्ता का प्रश्न उनके मन में कभी उत्पन्न नहीं हुआ, अतः पुत्रोत्पत्ति यद्यपि पुत्रहीनता को अपुत्रता का सूचक माना गया, यद्यपि पुत्राभाव में सद्गति प्राप्त नहीं होती --- ऐसा कथन भी नहीं है।

दार्शनिक तत्व :

ब्राह्मण ग्रन्थों में भारतीय दर्शन का विराट स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। ब्राह्मण ग्रन्थ ऋग्वेद और उपनिषदों के दार्शनिक तत्वों के मध्य परिवर्तनशील युग का प्रतिनिधित्व करते हैं। 'शतपथ ब्राह्मण' में संसार की उत्पत्ति-विषयक आख्यान भी प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त बौद्ध दर्शन के प्रादुर्भाव का श्रेय भी इन्हीं ग्रन्थों को है। जैमिनीय ब्राह्मण में सूर्य, चन्द्रमा, द्यौ, अन्तरिक्ष और पृथ्वी को गोलाकार बताया गया है। पृथ्वी को अग्निगर्भा भी बताया गया है।

विविध :

ब्राह्मण-ग्रन्थों में सर्वत्र ही कार्यशील रहने का उपदेश दिया गया है। उद्यमी व्यक्ति ही जीवन के माधुर्य का रसास्वादन कर सकता है। मनुष्य की श्रेष्ठता इसी में है कि वह सूर्य के समान गतिशील होकर कार्यरत रहे।

"चरन् वै मधु विन्दति, चरन् स्वादुमुदुम्बरम्।

सूर्यस्य पश्य श्रेममाणं यो न तन्द्रयते चरन्॥"

- चरैवेति चरैवेति (ऐतरेय ब्राह्मण)

ईश्वर भी कर्मशील मनुष्य का साथ देता है। जो मनुष्य परिश्रमी नहीं होता, उसे लक्ष्मी प्राप्त नहीं होती।

"नानाश्रन्तस्तिष्ठति इति रोहितश्रुश्रुमः।"

इन ग्रन्थों में मनुष्य के लिए सौ वर्ष या इससे अधिक जीने की इच्छा प्रकट की गई है –

'शतायुर्वै पुरुषः।'

प्रमुख ब्राह्मण ग्रन्थ

ब्राह्मण ग्रन्थ वेदों का गद्य में व्याख्या करने वाला खण्ड है। ब्राह्मण ग्रन्थ वैदिक वाङ्‍मय की वरीयता के क्रम में दूसरा हिस्सा (अंग) है, जिसमें गद्य रूप में देवताओं तथा यज्ञ की रहस्यमय व्याख्या की गई है और मन्त्रों पर भाष्य तथा टीकाएँ भी दी गई हैं। इनकी भाषा वैदिक संस्कृत है। हर वेद की ऋक् या ऋचाओं से अधिक ब्राह्मण ग्रन्थ हैं। हर वेद की अपनी अलग-अलग शाखा है। आज विभिन्न वेदों से सम्बद्ध सौ से अधिक ब्राह्मण ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थों के मुख्य रूप से चार प्रकार हैं ---

ऋग्वेदीय ब्राह्मण ग्रन्थ : ऋग्वेदीय ब्राह्मण ग्रन्थों का वर्णन निम्नलिखित है ---

ऐतरेय ब्राह्मण - इसके रचयिता महिदास ऐतरेय हैं। इसमें कुल 40 अध्याय हैं। मुख्य रूप से इसमें सोमयाग का वर्णन है। 1-16 अध्यायों तक एक दिन में सम्पन्न होने वाले अग्निष्टोम नामक सोमयाग का वर्णन है। 19-24 अध्यायों तक 12 दिन में सम्पन्न होने वाले द्वादश नामक सोमयाग का वर्णन है। 26-30 अध्यायों तक छोटे-छोटे कुल-पुरोहितों का वर्णन है। 31-40 अध्यायों तक राज्याभिषेक तथा राजपुरोहित आदि का वर्णन है।

इस कथा का अभिप्राय यह प्रतीत होता है कि यदि हरिश्चन्द्र कुछ प्रयत्न करता और वरुण को किसी अन्य ढंग से सन्तुष्ट करने का प्रयास करता, तो वह अपने पुत्र को बचा पाता और स्वयं को भी जलोदर रोग न होता। उधर वन में रोहित अपनी रक्षा का उपाय ढूँढ़ पाने में सफल हो जाता है, लेकिन इन्द्र रोहित को चलते रहने का ही उपदेश देता है।

ऐतरेय ब्राह्मण में स्त्रियों को भी समान अधिकार दिए गए हैं। उसे पुरुष की मित्र बताया गया है। पत्नी की सहायता से यज्ञ करने का विधान है। मनुष्य के लिए अपना जीवन-यापन करना ही अग्निहोत्र है, यदि वह श्रद्धा, मन, वचन और कर्म की अकुटिलता से युक्त होकर कोई कार्य करता है। इस प्रकार ऐतरेय ब्राह्मण के आख्यान जीवन-सम्बन्धी बहुमूल्य तथ्यों से ओत-प्रोत हैं। इन आख्यानों के माध्यम से सरल, सरस, रोचक तथा सारगर्भित भाषा में मनुष्यों को उपदेश दिया गया है।

शांखायन (कौषीतकि) ब्राह्मण - इसमें कुल 30 अध्याय हैं। पहले 6 अध्यायों में अन्य यज्ञों का वर्णन है। 7-30 अध्यायों तक अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास, चातुर्मास आदि सोमभागों का वर्णन है।

यजुर्वेदीय ब्राह्मण ग्रन्थ : यजुर्वेदीय ब्राह्मण ग्रन्थों का वर्णन निम्नलिखित है ---

शतपथ ब्राह्मण - यह शुक्ल यजुर्वेद की माध्यन्दिन तथा काण्व, दोनों शाखाओं पर उपलब्ध होता है। इसकी प्रथम शाखा के अन्तर्गत 100 अध्याय तथा 14 काण्ड हैं, जबकि द्वितीय शाखा ही प्रचलित है। इसके संचयिता ऋषि याज्ञवल्क्य माने जाते हैं।

माध्यन्दिन शाखा के पहले 9 काण्ड तो वाजसनेयी संहिता के पहले 18 अध्यायों पर टीका मात्र हैं। 11-13 काण्डों तक उपनयन, स्वाध्याय, अन्त्येष्टि-सम्बन्धी विषयों का वर्णन है। इसके अतिरिक्त अश्वमेध, पुरुषमेध आदि यज्ञों का वर्णन है। यहीं पर अन्त में याज्ञवल्क्य को शतपथ ब्राह्मण का संचयिता कहा गया है।

आख्यान की दृष्टि से भी यह ब्राह्मण अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसमें पुरुरवा-उर्वशी, दुष्यन्त-शकुन्तला, जल-प्लावन, वाणी-सोम तथा वशिष्ठ-विश्वामित्र सम्बन्धी आख्यान प्राप्त होते हैं। महाकवि कालिदास ने इसी ब्राह्मण में प्राप्त पुरुरवा-उर्वशी तथा दुष्यन्त-शकुन्तला से सम्बन्धित आख्यानों के आधार पर क्रमशः 'विक्रमोर्वशीयम्' तथा 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' नामक दो नाटकों की रचना की। शतपथ ब्राह्मण में जल-प्लावन अर्थात् मनु द्वारा मत्स्य को, जिसे मनु ने बड़े प्यार से पाला-पोसा था, मनु की रक्षा करने की यह कथा उसी रूप में अवेस्ता तथा बाइबिल में भी प्राप्त होती है।

शतपथ ब्राह्मण में सर्वप्रथम असुरि, कुरुपति, जन्मेजय तथा जनक उपाधिकारी राजाओं का उल्लेख मिलता है। यहीं पर प्रथम बार बौद्ध साहित्य में प्राप्त होने वाले अर्हत्, श्रमण और प्रतिबुद्ध जैसे शब्दों का प्रयोग हुआ है। शतपथ ब्राह्मण को सभी ब्राह्मणों में शिरोमणि स्वीकार किया गया है।

तैत्तिरीय ब्राह्मण - यह कृष्ण यजुर्वेद से सम्बन्धित है। यह तीन काण्डों में विभक्त है। प्रथम काण्ड में अग्न्याधान, वाजपेय, सोम, राजसूय आदि का वर्णन है। द्वितीय काण्ड में सौत्रामणि, वैश्यसव आदि का तथा तृतीय काण्ड में नक्षत्रेष्टि प्रधान रूप से वर्णित है। उपर्युक्त विषयों के अतिरिक्त इसमें भारद्वाज, नचिकेता, प्रह्लाद और अगस्त्य विषयक आख्यायिकाएँ, सत्यभाषण, वाणी की मधुरता, तपोमय जीवन, अतिथि-सत्कार, संगठनशीलता, ब्रह्मचर्यपालन आदि आचार-दर्शन तथा सृष्टि-विषयक वर्णन भी प्राप्त होता है।

सामवेदीय ब्राह्मण ग्रन्थ : सामवेदीय ब्राह्मण ग्रन्थों का वर्णन निम्नलिखित है ---

- **आर्षेय ब्राह्मण -** इसमें भी तीन ही प्रपाठक हैं। यह सामवेद की आर्षानुक्रमणी का कार्य करता है।
- **षड्विंश ब्राह्मण -** इसमें 26 अध्याय हैं। यह केवल नाम से ही स्वतन्त्र ग्रन्थ है, वास्तव में यह पञ्चविंश ब्राह्मण का परिशिष्ट ही है। षड्विंश ब्राह्मण के अन्तिम 6 अध्याय 'अद्भुत ब्राह्मण' के नाम से प्रसिद्ध हैं।
- **छान्दोग्य ब्राह्मण -** इसमें दो प्रपाठक हैं, जो आठ खण्डों में विभक्त हैं। इसके मन्त्र 'मन्त्र ब्राह्मण' भी कहे जाते हैं।
- **सामविधान ब्राह्मण -** इसके अन्तर्गत कृच्छ, अतिकृच्छ आदि व्रतों, पुत्र तथा ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए अनेक प्रकार के अनुष्ठानों का वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त इसमें तीन प्रकरण प्राप्त होते हैं।
- **देवताध्याय ब्राह्मण -** इसमें देवताओं तथा छन्दों का विवेचन प्रचलित है। यह तीन खण्डों में विभक्त है।
- **वंश ब्राह्मण -** इसमें सामवेद के गुरुओं की वंश-परम्परा का वर्णन है।
- **जैमिनीय ब्राह्मण -** इसमें यागानुष्ठानों का वर्णन है। इसे 'तवल्कार ब्राह्मण' भी कहा जाता है।
- **संहितोपनिषद् ब्राह्मण -** इसमें सामगान-पद्धति का वर्णन किया गया है।
- **पञ्चविंश ब्राह्मण -** इसे ताण्ड्य, प्रौढ़ और महाब्राह्मण भी कहते हैं। इसमें 25 अध्याय हैं और इसका प्रमुख विषय सोमयाग है - एक दिन से लेकर अनेक वर्षों तक चलने वाले यज्ञों का इसमें वर्णन है। इसके द्वारा व्रात्य क्षत्रियों को शुद्ध करके ब्राह्मण वर्ग में सम्मिलित किया जाता था।

Unleash the topper in you

अथर्ववेदीय ब्राह्मण ग्रन्थ : अथर्ववेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ का वर्णन निम्नलिखित है -

- **गोपथ ब्राह्मण -** अथर्ववेद पर यह एकमात्र उपलब्ध ब्राह्मण ग्रन्थ है। इसके ऋषि गोपथ हैं। यह दो भागों में विभक्त है - पूर्व गोपथ तथा उत्तर गोपथ।
- **पूर्व गोपथ -** इसमें 5 अध्याय हैं, जिनमें ओंकार का वर्णन, ब्रह्मचर्य का कर्तव्य, ऋत्विजों के कार्य, संवत्सर सत्र, पुरुषमेध, अश्वमेध, अग्निहोत्र आदि प्रसिद्ध यज्ञों का वर्णन है।
- **उत्तर गोपथ -** इसमें 6 अध्याय हैं। विभिन्न यज्ञों का और आख्यायिकाओं का वर्णन इसी में मिलता है।

आरण्यक साहित्य

ये आरण्यक ग्रन्थ ब्राह्मण ग्रन्थों और उपनिषदों के बीच की कड़ी हैं। कर्मकाण्ड की दृष्टि से ब्राह्मण ग्रन्थ एवं आरण्यक ग्रन्थ परस्पर सम्बन्धित हैं। संहिताएँ, ब्राह्मण, आरण्यक एवं उपनिषद् - वैदिक साहित्य के मुख्य अंग हैं। ये सब परस्पर सम्बन्धित एवं अन्योन्याश्रित हैं, एक-दूसरे के पूरक भी हैं। जबकि ज्ञानकाण्ड की दृष्टि से आरण्यक ग्रन्थ एवं उपनिषद् सम्बन्धित हैं - ये ब्राह्मण ग्रन्थों के अन्तिम रूप हैं और उपनिषदों के पूर्व रूप हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थों में यज्ञ की कर्मकाण्डपरक व्याख्या है, जबकि आरण्यक ग्रन्थों में यज्ञ की आध्यात्मिक व्याख्या दी गई है। ब्राह्मण ग्रन्थों के यज्ञ-सम्बन्धी विस्तार से ऊबकर कुछ विद्वान आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर हुए। इन ग्रन्थों ने ब्राह्मण ग्रन्थों के प्रतिपाद्य विषय की आध्यात्मिक शैली में व्याख्या की।

आरण्यक ग्रन्थों को 'आरण्यक' इसीलिए कहा जाता है क्योंकि ये नगरों और ग्रामों में नहीं, अरण्य अर्थात् वनों में पढ़े जाते थे तथा इनका सम्बन्ध वानप्रस्थ आश्रम से भी है। सायणाचार्य ने इनके नामकरण के विषय में स्पष्ट किया है कि ये वनों में पढ़े जाने के कारण 'आरण्यक' कहलाए।

"अरण्ये स्वाध्यायत्वाद् आरण्यकम्" इति यत्,
तथा "अरण्येऽनुज्ञायमानत्वाद् आरण्यकम्"
एवं "अरण्येऽध्ययनादेव आरण्यकम्" उदाहृतम्।

श्री वी. एस. आप्टे अपने संस्कृत-अंग्रेज़ी कोश में यह उल्लेख करते हैं। ब्राह्मण और उपनिषद् के समान आरण्यक ग्रन्थों की संख्या भी बहुत थी, किन्तु वर्तमान में केवल आठ आरण्यक ग्रन्थ ही उपलब्ध हैं।

ऋग्वेदीय आरण्यक :

- **ऐतरेय आरण्यक -** इसमें कुल 18 अध्याय हैं, जो पाँच भागों में विभक्त हैं तथा जो महाव्रत, प्राणविद्या एवं पुरुष का विवेचन प्रस्तुत करते हैं।
- **शांखायन आरण्यक -** इसमें कुल 15 अध्याय हैं। इसके तृतीय अध्याय से षष्ठ अध्याय तक के भाग को 'कौषीतकि उपनिषद्' के नाम से जाना जाता है। इसमें महाव्रत आदि का वर्णन है।

यजुर्वेदीय आरण्यक :

- **मैत्रायणी आरण्यक -** इसमें आरण्यक तथा उपनिषदों का मिश्रण है। यह कृष्ण यजुर्वेद की शाखा पर है, जिसमें 7 प्रपाठक हैं।
- **बृहदारण्यक -** यह शुक्ल यजुर्वेद तथा कृष्ण यजुर्वेद, दोनों शाखाओं में प्राप्त होता है। इसमें यज्ञों के रहस्य का वर्णन किया गया है। इसमें उपनिषदों के विषय की प्रधानता होने के कारण इसे 'उपनिषद्' नाम से भी जाना जाता है।
- **तैत्तिरीय आरण्यक -** यह कृष्ण यजुर्वेद का आरण्यक है। इसमें 10 प्रपाठक हैं तथा अग्नि की उपासना, इष्ट के चयन एवं पञ्चमहायज्ञ का वर्णन भी है। यज्ञोपवीत संस्कार का निर्देश सर्वप्रथम इसी से प्राप्त होता है।

सामवेदीय आरण्यक :

- **छान्दोग्य आरण्यक -** छान्दोग्योपनिषद् के प्रथम अध्याय को 'छान्दोग्य आरण्यक' के नाम से अभिहित किया गया है।
- **तवल्कार आरण्यक -** इसको 'जैमिनीयोपनिषद्' भी कहा जाता है। यह चार अध्यायों में तथा प्रत्येक अध्याय अनुवाकों में विभक्त है। तवल्कार आरण्यक ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषदों का मिश्रण है।

अथर्ववेदीय आरण्यक :

इसमें कोई भी स्वतन्त्र आरण्यक ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। आरण्यक ग्रन्थ के अन्दर वह ज्ञान निहित है, जिसका अध्ययन अरण्यवासी मनीषियों द्वारा किया जाता था। जिस प्रकार ब्राह्मण ग्रन्थों में गृहस्थाश्रम के यज्ञ-विधानों और अन्य कर्मों का वर्णन है, उसी प्रकार शुक्ल यजुर्वेद की माध्यन्दिन एवं काण्व शाखाओं में आत्मतत्व के ज्ञान का उपदेश बड़े सहज और सरल ढंग से किया गया है। कभी-कभी तो आरण्यकों और उपनिषदों में इतनी समानता हो जाती है कि उन्हें पृथक करना कठिन हो जाता है। वस्तुतः उपनिषद् ग्रन्थों में जिस विस्तृत ब्रह्मज्ञान व अद्वैत का प्रतिपादन है, उसका मूलाधार ये आरण्यक ग्रन्थ ही हैं। इनकी विधियाँ और व्याख्याएँ उपनिषदों में दी गई हैं।

वेदांग

वेदों के सम्यक् अनुशीलन के लिए और उनका वास्तविक अर्थ जानने के लिए जो ग्रन्थ उपयोगी व सहायक हैं, उन्हें वेदांग कहते हैं। वेदांग का अर्थ ही है - वेदस्य अङ्गानि, अर्थात् वेद के अंग। ब्राह्मण ग्रन्थों में यज्ञ-सम्बन्धी क्रिया-कलापों, विधि-विधानों इत्यादि का इतना अधिक विस्तार हो गया था कि उन्हें याद रखना अत्यधिक कठिन हो गया। ये ग्रन्थ सूत्र-शैली में लिखे गए हैं, अतः इन्हें सूत्र-साहित्य भी कहते हैं। जिस प्रकार अंगों के बिना शरीर की पूर्णता असम्भव है, उसी प्रकार वेदों के पूर्णज्ञान तथा यज्ञ आदि में उनके विनियोग के ज्ञान के लिए वेदांग अपरित्याज्य हैं। शिक्षा, व्याकरण, छन्द, निरुक्त, ज्योतिष और कल्प के भेद से वेदांग छः हैं।

"शिक्षा व्याकरणं छन्दो निरुक्तं ज्योतिषं तथा।
कल्पश्चेति षडंगानि वेदस्याहुर्मनीषिणः॥"

जिस प्रकार मनुष्य के शरीर में सभी अंगों का अपना-अपना विशिष्ट स्थान है और दूसरा कोई अंग उसका स्थान नहीं ग्रहण कर सकता, उसी प्रकार वेदों का पूर्ण अर्थ समझने के लिए प्रत्येक वेदांग का अपना महत्व है। प्रमुख वेदांगों का वर्णन निम्नलिखित है।

शिक्षा

'शिक्षा' को वेदरूपी पुरुष की नासिका माना जाता है - 'शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य'। शिक्षा उन ग्रन्थों का नाम है, जिनकी सहायता से वेदों के उच्चारण का ज्ञान भली-भाँति प्राप्त होता है। सायणाचार्य ऋग्वेद-भाष्य की भूमिका में शिक्षा की परिभाषा करते हुए कहते हैं ---

"वर्णस्वराद्युच्चारणप्रकारो यत्र शिक्ष्यते उपदिश्यते सा शिक्षा।"

अर्थात् जिसके द्वारा वर्ण, स्वर आदि के उच्चारण की शिक्षा दी जाती है, वह शिक्षा नामक वेदांग है। वेद-पाठ के समय शुद्ध स्वर-प्रक्रिया का होना आवश्यक है। उच्चारण का स्खलित और स्वरभ्रष्ट होना न केवल वेदपाठ को अशुद्ध बनाता है, बल्कि इसका बहुत बड़ा दुष्परिणाम भी हो सकता है। वेद में स्वर का हेर-फेर हो जाने से इष्ट के स्थान पर बहुत बड़ा अनिष्ट हो सकता है।

इस विषय में एक कथा प्राप्त होती है कि एक बार राक्षसों ने अपनी समृद्धि के लिए यज्ञ किया। वे कहना चाहते थे कि 'इन्द्र का शत्रु वृत्रासुर बढ़े', लेकिन उन्होंने 'इन्द्रशत्रुर्वर्धस्व' में अन्त्योदात्त के स्थान पर आद्योदात्त (आदि उदात्त) स्वर लगा दिया। परिणामस्वरूप यह